गुरुवाणी

जब हमारे युवा अपनी उपलब्धियों के साथ-साथ अपने चरित्र पर भी ध्यान देंगे तभी हमारा राष्ट्र पुनः खोई हुई (अपनी) संस्कृति और सम्पदा को प्राप्त करने में सक्षम होगा।

–पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

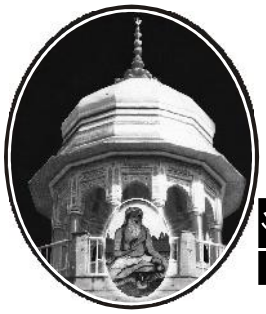

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्नाऽपरो मन्त्रो नास्ति तत्वम् गुरौः परम्।

R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No-G-2/VSI (E)-04/2016-18

युग-उद्धारक मुनि विज्ञानी। बाबा गौतम औघड़ दानी।।

वर्ष-१६, अंक ५, वाराणसी। मंगलवार १५ मार्च २०१६ ई० सहयोग राशि ४.२५

पूजा

आत्मा से परमात्मा के सम्बन्ध को बनाने के लिए अपनायी गयी प्रक्रिया को ही पूजा कहते हैं यानी आराधना, उपासना, साधना के द्वारा दिव्यत्व की प्राप्ति का नाम पूजा है। पूजा से मनुष्य अपनी निर्बलता, कायरता, आलस्य, विकार, दोष दुर्गण से सतत मुक्त होता रहता है। भगवान् की कृपा यानी गुरु की अक्षय शक्तिपात को हृदयांगम करने, धारण करने की ही पद्धति का नाम पूजा है। पूजा की कोई एक विशेष विधि, अवस्था अथवा तौर-तरीका सुनिश्चित नहीं है। हर प्रकार से अपने मनोभावों को, मोड़कर उस परम अज्ञात, कण-कण में विद्यमान के अथाह कृपा सागर में अपने सामर्थ्यानुसार एक दो अंजुली जल अर्पण के ही सद्प्रयास को पूजा शब्द से विभूषित किया जा सकता है। पूजा यानी अपनी भावना, प्रेम, समर्पण, आत्माराम की शरणागति! गुरु या ईश्वर आराधना के निष्फल चले जाने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। यहाँ तक कि जो अपने को अनिश्वरवादी अथवा नास्तिक की श्रेणी में रखते हैं वे भी अपनी पूजा अपने ढंग से करते हैं, बशर्ते वे पूरे मन, दिल, दिमाग, हृदय से नास्तिक हो। नास्तिक होना, निराकार ब्रह्म की उपासना जैसा है। ऐसा व्यक्ति भी यह तो स्वीकार करता ही है कि वह अमुक परिवार का अमुक स्थान का, अमुक माता-पिता की संतान है, उसका भी कोई शिक्षा-गुरु, आदर्श पुरुष अवश्य उसके जीवन दर्शन को प्रभावित किया होगा, जिससे उसने अपनी पूजा की पद्धति में बदलाव अथवा परिवर्तन कर लिया है। ऐसा बिल्कुल नहीं है कि पूजा का अर्थ मात्र आयावर्त में फैले या भारतवर्ष से विश्व के कोने-कोने में फैले सनातन धार्मिक व्यक्तियों तक सीमित है। पूजा, इबादत, प्रार्थना तो विश्वव्यापी है तथा यह कितना प्राचीनतम है, इसका लेखा-जोखा लेने पर यही प्रतीत होता है कि यह मानव की सभ्यता एवं उसके बुद्धि के विकास काल से ही प्रारम्भ है। पूजा-प्रार्थना, साधना-आराधना के पद्धति में मंत्र-मतान्तर अवश्य हो सकता है परन्तु इससे वंचित होने का प्रश्न ही नहीं उठता। पानी को जल, वाटर, नीर या किसी भाषा में सम्बोधित किया जाय, जीव-प्राणियों के प्यास बुझाने में एकमात्र यही प्रयुक्त होता है। प्रत्येक मनुष्य के रक्त में लगभग नब्बे प्रतिशत जल की ही मात्रा होती है यानी एक कोषांग में एक-एक यूनिट में जल के वातावरण में जीवनदायिनी तत्व तैरते रहते हैं तथा यह विश्वव्यापी मनुष्यों में एक समान होता है। रक्त का एक नमूना चाहे वह अमेरिका से हो, साइबेरिया से हो अथवा कहीं से भी हो उसमें उभयनिष्ठ सारे तत्व ही रक्त के प्रत्येक बूँदों की संरचना करते हैं। परीक्षण लेबोरेट्री में बैठकर रक्त नमूनों की जाँच कर यह कत्तई घोषित नहीं किया जा सकता कि इस रक्त का संवाहक हिन्दू है, मुसलमान है, ईसाई है, यहूदी है, निग्रो है या जापानी है चाईनिज है। ठीक उसी प्रकार यदि किसी व्यक्ति की सामान्य शरीर संरचना का अध्ययन किया जाय तो प्रकृति की समानता दृष्टिगोचर होती है क्योंकि भौगोलिक स्थिति, जलवायु की स्थिति, परिस्थिति से कद-काठी, सामान्य रंग-रूप में भले अन्तर होता हो, परन्तु आन्तरिक संरचना में तनिक भी अन्तर नहीं होता न तो उसके भूख-प्यास, इच्छा, जन्म, मृत्यु में ही अन्तर आता है। ठीक उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य की एक सामान्य प्रवृत्ति पारिवारिक, सामाजिक जीवन जीने की होती है। प्रत्येक व्यक्ति के मन में एक अबूझ पहेली की भाँति सांकेतिक द्वन्द्व चलता रहता है, जिसमें कोई पास न रहने पर भी अपनी स्वयं की आत्मा से बातचीत होती रहती है। एक दिशा-निर्देश मिलता है जिस पर चलना सुखद, लाभप्रद होता है उसमें व्यक्ति को अतिशय आनन्द की प्राप्ति होती है। वह निरन्तर उसमें अधिक से अधिक रुचि लेता रहता है, इसी कृत्य का नाम पूजा है। जिसमें अपनी आत्मा के आज्ञानुसार हम चलें, चंचल दिमागी स्थिति को आत्मनियंत्रण में रखकर यदि हम अपने आत्माराम के संकेतों पर चलकर अपने मनपसंद पेशा, रोजी, रोजगार अध्ययन अथवा तिजारत में लगे रहेंगे तो वही वास्तव में पूजा है। इसके विपरीत जो व्यक्ति आत्माराम की आवाज को अनसुनी कर देता है, वह अपने चंचल मन के वश में होकर आपराधिक कृत्य अथवा जघन्य कर्म बड़े ही चालाकी, होशियारी या सूझबूझ से करता है, वही व्यक्ति, स्वयं से धोखा करता है, वह स्वयं अपने आत्मा का ही अपराधी है, क्योंकि बड़े सरकार पूज्य अवधूत भगवान राम जी की वाणी है कि क्या तुम नहीं जानते कि मनुष्य का शरीर स्वयं ही मंदिर है जिसमें आत्माराम रूपी परमात्मा बैठा हुआ है। ईश्वर को ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं है। हम प्राय: समाज में देखते हैं कि अपराध जगत के नियन्ता स्वयं की आत्मा को पददलित, धूलधूसरित करने के लिए मद्यपान करते हैं ताकि उस अज्ञात की आवाज उनके अभ्यन्तर को झकझोरने न लगे। ऐसे अपराधी प्रवृत्ति के व्यक्ति अपनी आत्मा की आवाज को किसी प्रकार दबा कर ही रात्रि को नींद ले पाते हैं। यद्यपि आंतरिक हलचल से वे स्वयं ही चौबीस घंटे व्यथित रहते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि कोई भी व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में कार्य करता हो अपने कार्य से अपने व्यवसाय से प्रेम करे उसमें आत्मा लगाये तो वही वास्तविक पूजा है। अपने को संशय में रखते हुए गुरुद्वारा अथवा किसी मंदिर में जाना भी अकारथ ही जाता है क्योंकि हृदय से वह अपना उस स्थल, उस गुरु उस देवता के प्रति विश्वास प्रकट नहीं करता।

शेष पृष्ठ तीन पर

होली आई रे!

प्रकृति नवशक्ति से ऊर्जावान है और इसमें नवरंग का तेज है। मानव इस नवशक्ति एवं नवरंग को अपने में समेटकर या प्रकृति में ही खुद को सिमटाकर हर पल कुछ न कुछ नया करना चाहता है। इतना ही नहीं अपने आपको प्रकृति में सिमटाकर कुछ ऐसा कर गुजरना चाहता है कि प्रकृति हर पल आभामय नजर आवें और प्रकृति यह सोचे कि हमें नवरंग का ऊर्जा देने वाला कौन है तो उसे यह मालूम हो जाता है कि यह और कोई नहीं हर पल अनुसंधान करने वाला, अविष्कार करने वाला मानव है तो मानव होना आवश्यक है और होली पर प्रकृति को आभामान बनाना आवश्यक है। अब यहीं पर कहिये- होली आई रे!

बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

शिव के दरबार- होली का त्योहार

अत्याचार, बुराईयों पर अच्छाई की विजय यानी विविध रंगों को मिलाकर सतरंगी एकता की स्थापना, समाज में समानता, सौहार्द, आपसी प्रेम समरसता को समाज में व्याप्त कर मानव जीवन को समुन्नत सुखी बनाने के लिये ऋषि-मुनियों एवं पूर्वजों के द्वारा परम्परानुसार पूरे भारतवर्ष में फाल्गुन माह की पूर्णिमा तिथि को होली मनायी जाती है। ध्यातव्य है कि हमारे प्रत्येक त्योहार का सृजन किसी न किसी महत्वपूर्ण कथानक के सुपरिणाम को बौद्धिक रूप से अपनाये जाने के लक्ष्य को दृष्टिपात रखते हुए किया गया है। जिस प्रकार राजा हिरण्यकशिपु के अत्याचार से उनके पुत्र भक्त प्रह्लाद की भगवान नरसिंह के द्वारा रक्षा किया गया यानी खम्भा फाड़कर अत्याचार का वध एवं सदाचार, सत्य की स्थापना कर मानव समाज को एक शाश्वत, स्थायी संदेश दिया गया है कि एक न एक दिन बढ़ती हुई आसुरी शक्तियों का सर्वनाश अवश्य होता है। इसी वैज्ञानिकता को सामाजिक स्तर पर सर्वदा स्मरण कराने, फैलाने, भाईचारा, आपसी सद्भाव बढ़ाने के उद्देश्य से होली के त्योहार को प्रतिवर्ष मनाये जाने की प्रथा कायम है।

देवाधिदेव महादेव अड़भंगी, आशुतोष औघड़ की वेशभूषा, कार्यक्रम, कालकूट के साथ गले में ब्याल धारण करना उनका बाघम्बरी पहनावा यानी नख से सिख तक विभूति रमाये हुए एक-एक गतिवधि में होली का दृश्य समाहित है। परपीड़ा उद्धार हेतु समर्पित बिना भेदभाव के भक्तों की साधना, उपासना, प्रार्थना, तपस्या से शीघ्र ही प्रसन्न होकर ''तथास्तु'' का वर देने वाले भूतभावन अघोरेश्वर भगवान शंकर के द्वारा मानव समाज को आश्वस्त किया गया है कि महादेव के अंशभूत के रूप में हमें भी अपने-अपने सामर्थ्यानुसार पर-पीड़ा उद्धार परहित के लिये थोड़ा-थोड़ा स्वार्थ त्याग से निरन्तर बहुत बड़ी उपलब्धि होती जायेगी जिसका फल कालान्तर में बढ़ता ही जायेगा जिस प्रकार अनायास ही श्वास-प्रति श्वास हम अपने में से उत्पन्न वर्ज्य कार्बन-डाई-आक्साइड का त्याग करते हुए प्राणवायु आक्सीजन को ग्रहण करते जाते है, उसी प्रकार शरीर के साथ ही आत्म विकास करने के लिये हमें होली के पवित्र त्योहार के अवसर पर अपने अन्दर जड़ जमाये हुए दुर्गुणों यथा आलस्य, प्रमाद, मुफ्तखोरी की आदतों को को तिलांजलि देते हुए जीवन के नव प्रभात में नवकिसलय के साथ नयापन को धारण कर विकास किया जाना श्रेयस्कर है। जिस प्रकार बसंत ऋतु यानी फाल्गुन के पूर्व मास में पेड़-पौधों द्वारा अपने पुराने पत्रों को झाड़कर नये कलेवर के साथ कोमल कोपलों, बौरों से अपने को लक-दक आच्छादित कर लिया जाता है तथा एक घने हरियाली को ओढ़कर नवीनता का संचार किया जाता है उसी प्रकार महाशिवरात्रि से श्रीगणेश कर होली तक हम सबको भी अपने जीवन को सँवारने, सुधारने, परिष्कृत करने हेतु ऊर्जान्वित होकर संकल्पित होना चाहिए। परिवार के सदस्यों के साथ, समाज के एक-एक परिचितों के मध्य आपसी सौहार्द, भाईचारा, प्रेम प्रगाढ़ता में परस्पर वृद्धि का योग बनना ही होली के त्योहार को सही अर्थों में मनाया जाना है।

होलिका में जैसे आस पड़ोस में फैले वर्ष भर के सूखे झाड़-झंखाड़, कूड़ा-कर्कट को जलाये जाने की प्रथा है, तदोपरान्त प्रसन्न होकर रंगों में डूबकर वैर-भाव भुलाकर, एक दूसरे के माथे एवं चरण पर अबीर गुलाल रखने का अभिप्राय यही है कि इस दुर्लभ मानव जीवन में सतत सतर्क रहकर हम अपने दुर्गुणों, बुराईयों से अपनी रक्षा करें, बड़ों से सीख लें तथा स्वयं एवं समाज में एक निर्मल रंगभरे रसधार फुहार से एक दूसरे को भींगोकर एक साथ मिल जुलकर उत्तरोत्तर जीवन को सार्थक बनाते रहे। इस पर्व पर जड़ जमाये हुए कुप्रथाओं यथा नशापान, नारी-अपमान, अश्लीलता, फूहड़पन को सदा के लिए त्याज्य कर अपने आने वाली पीढ़ियों को यथा वांछित सुन्दर संदेश संप्रेशित करे, ताकि उनका भावी जीवन, कूड़ा-कर्कट, आपदाओं, विपदाओं से सदा पृथक रहे एवं राष्ट्र की रीढ़ शक्तिशाली बनती जाये। विशेषकर वर्तमान परिवेश में यदि हम थोड़ी गम्भीरता से सोचे, तो दिनोंदिन बढ़ती वैमनस्यता, धूर्तता, ठगी एवं आतंकवादी घटनाओं ने हमारे चैन को छीन लिया है। अटक से कटक तथा कश्मीर से कन्याकुमारी तक राष्ट्र पर घातक नाना प्रकार के अज्ञात खतरे के बादल मडंरा रहे है। भारतीय विविधता के पुष्पों की क्यारियों की जड़ों में जहरीली राष्ट्र विरोध वैचारिक खाद एवं सिंचाई से युवा से लेकर प्रौढ़ पीढ़ी तक हैरान, परेशान है। आखिर इसका इलाज, समाधान क्या है? इसका एकमात्र इलाज ईमानदारी से इस धरा पर सबका समान अधिकार एवं अपनी-अपनी संस्कृति के अनुसार एक दूसरों का सादर सम्मान करते हुए जीवन यापन करना है, जैसा कि वर्तमान पीठाधीश्वर जी की वाणी की निम्न पंक्तियाँ स्वमेव दिशा निर्देशित कर रही है ''हिन्दु, मुस्लिम, ईसाई विचारधारा सब एक है। इन सभी का ध्यान अन्त:करण की ओर है। आवश्यकता है सभी धर्मों की विसंगतियों को परे कर या दूर कर हिन्दू-मुसलमान-ईसाई विचारधारा की इस समानता को समझें। हमारा कोई आचरण राष्ट्रीय हित के विरुद्ध न हो। हमारे प्रत्येक आचरण से प्रकृति के समस्त प्राणियों में करुणा और न्याय के भाव का जन्म हो। यही सच्ची साधना एवं पूजा है।

इस मनोहर त्योहार पर अपने गुरु वाक्यों पर हमें गौर करना चाहिए, जिसमें आपसी एकता, पारिवारिक, सहृदयता, धैर्य, धारण करने एवं निरन्तर अपने बुराईयों को गुरु की होलिका रूपी दहकते रुद्राग्नि में समर्पित करते रहने का व्रत लेना चाहिए, फलत: हम प्रत्येक को एक उद्भूत हल्कापन, नयापन के नवसंचार का अनुभव होगा जिससे हम अपनी प्रवृत्ति एवं आदत में सुधार कर हम अपने को अघोरेश्वर की कृपा के सतरंगी रंगों से सराबोर कर हृदय से प्रसन्नता का अनुभव करते हुए प्राकृतिक खिलखिलाहट की सहजता को धारण कर सौभाग्यशासली बनने का गौरव प्राप्त कर सकें।

नव संवत्सर २०७३ चैत्र प्रतिपदा के अवसर पर ''अघोरेश्वर निनाद'' परिवार की ओर से सभी श्रद्धालुओं, पाठकों को नव-वर्ष की बधाई एवं हार्दिक शुभकामनाएँ!

शोक समाचार

क्रींकुण्ड स्थल के परम श्रद्धालु भक्त श्री भूपेन्द्र प्रताप सिंह (रिन्टू जी) के पिता रामनारायण सिंह निवासी प्यारेपुर, सादात, गाजीपुर विगत दिनांक 6 मार्च 2016 दिन रविवार को शिव सायुज्य में समाहित हो गये।

हुतात्मा को अघोरेश्वर शान्ति प्रदान करें एवं शोक सन्तप्त परिवार को संबल प्रदान दें।

शोक समाचार

क्रींकुण्ड स्थल के परम श्रद्धालु भक्त डॉ0 करुणेश चौबे के पिता डॉ0 रामउग्रह बाल मुकुन्द चौबे निवासी ग्राम व पोस्ट-सरौनी, केराकत, जौनपुर विगत दिनांक 26 फरवरी 2016 को शिव सायुज्य में समाहित हो गये।

हुतात्मा को अघोरेश्वर शान्ति प्रदान करें एवं शोक सन्तप्त परिवार को संबल दें।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ 0542-2277155.
e-mail–kinaram@rediffmail.com
www.aghorpeeth.org

फार्म-4

(नियम 8 देखिये)

1. प्रकाशन स्थान	:	वाराणसी
2. प्रकाशन अवधि	:	पाक्षिक
3. मुद्रक का नाम	:	अरुण कुमार सिंह
(क्या भारत के नागरिक हैं?)	:	जी हाँ
4. प्रकाशक का नाम	:	अरुण कुमार सिंह
(क्या भारत के नागरिक हैं?)	:	जी हाँ
5. सम्पादक का नाम	:	चन्द्रनाथ ओझा
(क्या भारत के नागरिक हैं?)	:	जी हाँ
6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	:	अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान, कीनाराम स्थल, रविन्द्रपुरी (शिवाला), वाराणसी।

मैं अरुण कुमार सिंह एतद्द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य है।

प्रकाशक के हस्ताक्षर

दिनांक : 15.03.2016 **(अरुण कुमार सिंह)**

अवधूत भगवान राम सेवा सदन अनपरा में ३ २वाँ वार्षिकोत्सव एवं महाशिवरात्रि महोत्सव

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी अवधूत भगवान राम सेवा सदन आश्रम, अनपरा, सोनभद्र में दिनांक ७ मार्च २०१६ दिन सोमवार को आश्रम का ३२वाँ वार्षिकोत्सव एवं महाशिवरात्रि महोत्सव का आयोजन बड़े ही श्रद्धा एवं उल्लासमय वातावरण में मनाया गया। ध्यातव्य है कि परम पूज्य भगवान अवधूत राम जी के चरणानुरागी ब्रह्मलीन परम प्रिय शिष्य अवधूत सिंह शावक राम जी के द्वारा विन्ध्य पर्वतमाला की गोद में, लभग एक एकड़ भूमि में आज से ३२ वर्ष पूर्व समाज के वंचित, शोषित, अशिक्षित, अभावग्रस्त जनों के सर्वकल्याण हेतु इस पावन आश्रम की स्थापना महाशिवरात्रि के दिन ही की गई थी। मुख्य मार्ग के एक तरफ अनपरा थर्मल पावर कारपोरेशन एवं सड़क के दूसरी ओर १०० मीटर की परिधि में स्थापित पावन आश्रम में स्थानीय वनवासियों के बच्चों को रहने एवं शिक्षा, स्वावलम्बन हेतु उत्तम प्रबंध किया गया है। आश्रम में काले पत्थर की कपालेश्वर/अर्द्धनारीश्वर की दुर्लभ मूर्ति के साथ नंगटा महादेव, माँ गौरी के साथ ही परमपूज्य अवधूत भगवान राम जी एवं अवधूत सिंह शावक राम जी की पावन समाधियाँ श्रद्धालुओं भक्तों का मनोरथ पूर्ण कर रही हैं। यही से पश्चिम लगभग एक किमी के फासले पर भगवान अवधूत राम स्नातकोत्तर महाविद्यालय का भव्य भवन एवं हास्टल अवस्थित है।

पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार प्रात: से ही उपस्थित विपुल स्थानीय निवासियों एवं श्रद्धालुओं के मध्य हर हर महादेव के समवेत स्वर लहरी के साथ सर्वेश्वरी ध्वज पूजन, समाधि पूजन (रुद्राभिषेक) का कार्यक्रम अघोर सेवा मंडल, गिरनार आश्रम, दिलदारनगर से पधारे आचार्य एवं प्राचार्य श्री चन्द्रभूषण शुक्ल जी के द्वारा सम्पन्न किया गया। भव्य पंडाल में श्रद्धालुओं द्वारा गोष्ठी के आयोजन के फलस्वरूप पूर्व से ही स्थान ग्रहण कर लिया गया था। मंच पर उपस्थित मुख्य अतिथि श्री राकेश द्विवेदी, डिप्टी लेबर कमिश्नर, मिर्जापुर क्षेत्र पिपरी की उपस्थिति में बौद्धिक अघोर गोष्ठी के कार्यक्रम का संचालन महाविद्यालय के वरिष्ठ हिन्दी प्रवक्ता डॉ० चन्द्रशेखर तिवारी के द्वारा द्वारा आचार्य श्री चन्द्रभूषण द्विवेदी जी की अध्यक्षता में सम्पन्न किया गया। गोष्ठी के मुख्य वक्ताओं में सर्वश्री बी०बी० द्विवेदी जी प्रबंधक पंजाब नेशनल बैंक शाखा-अनपरा, डॉ० अनिल पाण्डेय जी, डॉ० बी०पी० सिंह जी का योगदान रहा। महाविद्यालय की संस्कृत विभागाध्यक्ष डॉ० नीरा मिश्र के उद्बोधन में महाशिवरात्रि महत्व को दर्शाते हुए आपसी भाईचारा, प्रेम, सौहार्द के साथ मानवता की सेवा को ही अघोर दर्शन बताया गया। डॉ० मिश्रा जी के द्वारा सस्वर शिवताण्डव स्त्रोत का पाठ भक्तिमय वातावरण को और सरस बनाकर श्रद्धालुओं के करतल ध्वनि को बटोरता रहा। गोष्ठी में समारोह के मुख्य अतिथि श्री द्विवेदी जी ने विभिन्न धर्मों का निचोड़ मनुष्यता एवं आपसी भाईचारा में सतत वृद्धि को ही बताया। अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में श्री शुक्ला के द्वारा गुरु के निर्देशों के अनुसार चलकर उन्हें जीवन में क्रियान्वित किये जाने को ही वास्तव में महाशिवरात्रि महोत्सव का सार बताया गया। साथ ही वर्तमान परिवेश में समाज के वंचित वर्ग के मध्य शिक्षा एवं स्वास्थ्य की गुणवत्ता को बरकरार बनाने हेतु जन-जन को जागरूक रहने की चुनौती का स्मरण कराया गया।

भगवान अवधूत राम स्नातकोत्तर महाविद्यालय की प्राचार्या श्रीमती पूनम सिंह जी के द्वारा गोष्ठी के अन्त में धन्यवाद प्रकाशित किया गया एवं गोष्ठी समापन की घोषणा की गयी।

समारोह के अन्त में भव्य भंडारा एवं दरिद्र नारायण भोजन का आयोजन लगभग एक बजे से किया गया जिसमें हजारों हजार की संख्या में स्थानीय वनवासियों, निवासियों के साथ ही बाल, वृद्ध-बच्चों को प्रसाद ग्रहण कराया गया।

आयोजित कार्यक्रम के सफल सम्पन्नता हेतु अघोर सेवा मंडल के सचिव श्री अरविन्द सिंह का अप्रतीम योगदान उल्लेखनीय रहा। साथ ही महाविद्यालय के स्टाफ श्री राजेश सिंह जी, अघोरभक्त श्री संजय सिंह जी, क्रींकुण्ड, वाराणसी से उपस्थित सर्वश्री इन्द्रजीत सिंह जी, रवीन्द्र लाल श्रीवास्तव एवं चन्द्रनाथ ओझा, सम्पादक, ''अघोरेश्वर निनाद'' आदि ने समारोह में भाग लेकर अपने को कृतार्थ किया।

अनवरत साढ़े चार बजे मध्याह्न तक चले भंडारा कार्यक्रम में लगे हुए नौजवानों, स्वयंसेवकों का सेवा भाव उनके उज्जवल भविष्य को रेखांकित करता रहा।

आश्रम की दीवारों पर उत्कीर्ण औघड़ वाणियों के साथ ही उपस्थित जन समुदाय द्वारा अघोर सेवा मंडल के अध्यक्ष परमपूज्य अघोरेश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी की सद्प्रेरणा को हृदय में धारण कर समाज की कुरीतियों के समूल उन्मूलन हेतु परोक्ष संकेत की चर्चा होती रही। इसी प्रकार अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं संस्थान तथा अघोर सेवा मंडल के समस्त आश्रम शाखाओं में महाशिवरात्रि का पावन पर्व मनाये जाने की सूचना प्राप्त हुई है।

प्रथम पृष्ठ का शेष

''पूजन'' के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए पूज्यपाद प्रात: स्मरणीय भगवान अवधूत राम जी के द्वारा इसे एक अलग अध्याय के रूप में ''अघोर वचन शास्त्र'' नामक प्रायोगिक ग्रन्थ में स्थान दिया गया है। जिसमें छल-छद्म भरे पुजारी को पूजा का अरि यानी शत्रु बताया गया है ऐसे व्यक्ति पुजारी के वेश में समाज, मानवता के शत्रु होते हैं हाथ में बजाने वाली घंटी रहती है, वही दिमाग दीगर सांसारिक छल-कपट में उलझा रहता है, ऐसे पुजारियों के लिये गोस्वामी जी ने भी ''मुनि न होहीं यह निसिचर घोरा'' की उपमा प्रयुक्त किया है।

विशेष समय व काल में जैसे नवरात्र, दीपावली के अन्तर्गत की गई पूजा आराधना, जप यदि निर्विकार भाव से किया जाय तो अतिशीघ्र निश्चित ही मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है परन्तु निश्छलता, निष्कपटता को शीघ्र प्राप्त नहीं किया जा सकता यानी कि पूजा करने की पात्रता विकसित कर लेना ही पूजा करना है, अन्यथा बनावटी, ढोंगी की श्रेणी में हम आबद्ध हो जाते हैं। पूजा से पवित्रता, भक्ति का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। विकारों को ढ़ोते हुए पूजा सफलीभूत नहीं होती। इसे स्पष्ट करते हुए संत कबीरदास जी कहते हैं—

पूजा

कामी, क्रोधी, लालची इनसे भक्ति न होय।
भक्ति करे कोई सूरमा जाति वरण कुल खोय।।

यानी सच्चे सतकर्मी पुजारी का कोई निश्चित जाति, वर्ण या कुल नहीं होता, बल्कि वह समष्टि के लिये ही होता है। तुलसीदास जी ने भी विकारों से रहित होकर ही भक्ति भाव के लिये आग्रह किया है—

काम, क्रोध, मद, लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहीं भजहुँ, भजहीं जेही संत।।

यानी पूजा करने का सच्चा अधिकारी संत के कोटि का व्यक्ति ही होता है, उसी के द्वारा पूजा के विभिन्न सोपानों का पालन यदि सदाशयता से, निरन्तरता से व्यक्ति करता जाये तो उसके तप के प्रभाव से शीघ्र ही उसके पूर्व काल में किये गये पाप, कर्म भी भस्मीभूत हो जाता है। फलस्वरूप वह व्यक्ति प्रसन्नता, निर्मलता का पर्याय बन जाता है उसके चहुँओर अच्छे वातावरण का सृजन हो जाता है। अत: प्राणायाम, ध्यान, प्रत्याहार, धारणा, समाधि, यम, नियम, आसन अष्ट सोपान पूजा के ही पावन परिणाम की प्राप्ति हेतु निर्दिष्ट किये गये हैं। उपर्युक्त सभी साधन पूजा के सविधि किये जाने में सहायक होता है।

पूजा चाहे जिस देश, प्रदेश, स्थान के व्यक्ति द्वारा की गई हो उसे पूजा की संज्ञा तभी दी जा सकती है जिसमें ''सर्वे भवन्तु सुखिन:, सर्वे सन्तु निरामया:'' की भावना जुड़ी हो अन्यथा एक धूर्त, एक जुआरी एक ठग भी अपने कार्य को बड़े मनोयोग से अंजाम दे देता है पर उसका फल दूसरे के साथ ही उसके लिये भी अन्तत: जहरीला ही सिद्ध होता है। ऐसे चालाक, अनाचारी मनुष्यों के लिये बड़े सरकार पूज्य अवधूत भगवान राम जी द्वारा कही गयी उक्त सूक्ति ''पापियों के बढ़ते ऐश्वर्य को देखकर धर्मफल में संदेह न करें। फाँसी के मुजरिम को पहले मनपसंद भोग सामग्री दी जाती है।'' जो आज भी अत्यधिक प्रासंगिक है। वास्तविक पूजा का सम्बन्ध औपचारिकता, दिखावापन, छल, प्रपंच, पाखंड से बिल्कुल नहीं है। वह तो पूर्ण समर्पण को न्योता देती है। पूजा में सामग्री की पूजा नहीं की जाती बल्कि वह तो भावों का अर्पण होता है। स्व० कवियत्री सुभद्रा कुमारी जी चौहान की लेखनी उनके हृदय के उद्गारों को व्यक्त करती हुई कहती हैं-

पूजा और पुजापा प्रभुवर इसी पुजारन को समझो।
दान, दक्षिणा और न्योछावर इसी भिखारन को समझो।।
मैं उन्मत्त प्रेम की लोभी हृदय दिखाने आयी हूँ।
जो कुछ भी है यही पास है इसे चढ़ाने आयी हूँ।।

उपर्युक्त पंक्तियों में पूजा के वास्तविक अर्थ की यथार्थता का बोध कराते हुए मीरा की भावना से प्रेम की आराधना को ही वास्तविक पूजा कहा गया है। समाज के सच्चे पुजारी तो घर गृहस्थी में भी सन्तों के आचरण करते हुए निवास करते हैं। जो स्वयं में चलते फिरते प्राण-प्रतिष्ठित देवालय ही होते हैं। ऐसे व्यक्ति, ऐसे महापुरुष रूपी पारस पत्थर से स्वयं का स्पर्श कराकर लौह से स्वर्ण बनकर समाज में देदीप्यमान रहते हैं। वे जहाँ भी जाते हैं तीर्थस्थल का लाभ लोग उनसे मिलकर लेते हैं। यह जरूरी नहीं है कि वे हर मंदिर में जाकर मत्था टेके अथवा हर नदी, सरोवरों में स्नान करते फिरे क्योंकि वे सम्पूर्ण रूप से यानी रोम-रोम से पुजारी होते हैं। हमारी भारत भूमि धन्य है जिसमें राम कृष्ण परमहंस, वामा खेपा, तैलंग स्वामी, अघोराचार्य बाबा कीनाराम जैसे महान विभूतियों का अवतरण स्वयं में तीर्थ सागर की भाँति हुआ है। आज भी उनके रूपान्तरित अवतरण से इस घोर घटाटोप छाये वातावरण में विशुद्ध वायु की झोंके की तरह पावन आनन्द आश्रय-जिज्ञासु, संवेदनशील भक्तगण पा रहे हैं एवं अपने अभ्यन्तर में एक शुद्धबुद्ध जीवन जीते हुए जीवन के एक-एक पल का सदुपयोग कर रहे हैं।

तिलक-दहेज उनके लिए है जिनको समाज के प्रति श्रद्धा नहीं है

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

धर्मबंधुओं !

मेरा इस तरह के कार्यक्रम में दिलचस्पी लेने का एक कारण है। मैं साधु हो गया। समाज का मेरे ऊपर इस तरह का भार तो नहीं है पर मेरा समाज के प्रति कुछ कर्त्तव्य है कि इसकी परेशानियों, कठिनाइयों के बारे में कुछ सोचूँ और जहाँ तक हो सकें, सहयोग करुँ।

आप जानते हैं, कहा भी गया है 'अर्थ न धर्म न काम रुचि।' बगैर अर्थ के धर्म भी नगण्य सा रहता हैं अर्थ से ही धर्म का पालन होता है और मोक्ष की भी पूर्ति होती है। इस तरह अपने जीवन में अर्थ की क्षति से भारी दु:ख होता है तो दूसरों को भी यह क्षति हम न पहुँचाएं और फिर जो अपने सम्बन्धी होने वाले हैं, जिनके साथ जीवन पर्यन्त का नाता होने वाला है उनके अर्थ-अपहरण की बातें अच्छे लोग कैसे सोच सकते हैं? तो तिलक दहेज तो उन्हीं के लिये है जिनको समाज के प्रति, अपने सम्बन्धियों के प्रति कोई श्रद्धा नहीं है। ऐसे लोगों के सहयोग से, मैं अपनी तरफ से वंचित ही रहना चाहता हूँ। यह तो उन लोगों के लिए है जो समाज के प्रति चिन्तन करते हो, जो भावी समाज के लिए एक आदर्श रखते हों, उनके लिये नहीं जो सिर्फ अपने लिये और अपने कुटुम्बियों के लिये जीते हैं।

उन धनी-मानी तथा दम्भियों के लिए यह सब कार्य बड़ा दूर है, दु:सह है। क्योंकि उनकी कामनाएँ उनके क्रिया-कलाप सदा दम्भ के अन्तर्गत ही होंगे। पर वे भी कन्याओं तथा उनके परिवार वालों को कष्ट पहुँचाकर सुख चैन से नहीं रह सकते। क्योंकि वे तो सबके घर जाने वाली हैं, सबके घर पैदा होंगी और परेशानी खड़ी कर देंगी।

हम यदि साधारण हैं, विचारवान हैं तो खुद समझ सकते हैं कि जिसके साथ सम्बन्ध करते हैं उसकी सम्पत्तियों का इस तरह से अपहरण कराकर कौन सी बुद्धिमत्ता करेंगे। शादी, बारात में अपने सम्बन्धी के धन का अपहरण कराकर दो घण्टे के लिए लोगों की वाहवाही प्राप्त करते हैं फिर वे ही लोग बाद में धिक्कारते हैं। आप खुद देखें होंगे।

तो इस तरह जो आपकी जाति में, देश में यह अव्यवस्था फैलाये हैं, उनका धीरे-धीरे डट कर विरोध करें और उन लोगों के प्राति एक त्याज्य, घृणित भावना रक्खें क्योंकि उनका कार्य नरपिशाचों की तरह है। वे इंसान की शक्ल में शैतान हैं। उनका काम शैतान का है जो अपहरण करते हैं, दबाव देते हैं और इन कुरीतियों में सहयोग करते हैं।

वे लोग जो अपने कुटुम्बियों, अपने बच्चों के लिये ही जीते हैं वे कुटुम्बी भी उनके आदर्शों के प्रति स्नेह नहीं रखते। आने वाला भविष्य उनका साथ नहीं देगा। आप जानते हैं, बुद्ध ने भी कहा है, उत्पन्न धर्म, विनाश धर्मा जो अपना आचार, नियम, व्यवस्था बंधन हो गया है, स्वाभाविक और सामयिक नहीं है, वह सुख कर नहीं हो सकता।

तो जो समाज के लिये आदर्शहीन हैं, जो सार्वभौम नहीं हैं, जो कूपमंडूप से अपने ही में चलते हैं, जिनके हृदय में, जो समाज टूटा है उसे जुटाने के लिये श्रद्धा नहीं, यह उनके लिये नहीं। यह तो उनके लिए है जो समाज के उज्ज्वल भविष्य के लिए कुछ श्रद्धा रखते हैं।

आपने इस सरल, सुगम, आडम्बर रहित परम्परा को देखा जो और कुछ नहीं बल्कि अपने ऋषियों-महर्षियों की ही परम्परा है। इसके साथ ही इसमें देश की संवैधानिक तथा कानूनी बातों की भी व्यवस्था की गयी है। यह पद्धति उन धनी-मानी लोगों के लिए नहीं है जो सुखी हैं, सम्पन्न हैं बल्कि हम मध्यम वर्ग के लोगों के लिए ही है। हमारे मिलने वाले मध्यमवर्गीय लोग जो हैं, उनकी बड़ी उलझने हैं, परेशानियाँ हैं। गरीब तो अपना समय किसी तरह काट लेता है पर जो मध्यमवर्गीय हैं उनकी संख्या इस देश में बहुत ज्यादा है और उनकी परेशानियाँ भी उतनी ही ज्यादा हैं। उनके लिए यह मार्ग है। उनके लिये यह विचारणीय विषय हैं। वे विचार करेंगे और इस मार्ग पर चलेंगे, मुझे आशा है।

आप लोगों ने इस समय के मांगलिक कार्यों को देखा और इसके बारे में सुना। इसकी ऐसी ही धारणा है। जो अपना मध्यम वर्ग का समाज है वह बड़ी उलझनों और दु:खों में है। उसके ऊपर रुढ़िता का बहुत प्रकोप है। वे उसे तोड़ने में बहुत हिचकिचाते हैं, तोड़ नहीं पाते, दु:ख, उलझनों से संघर्ष नहीं कर पाते। अनिश्चितता उनके साथ हो गयी है, मन-मस्तिष्क निश्चित नहीं रह जाता।

तो यह विवाह पद्धति उन धनी मानी व्यापारी लोगों के लिए नहीं है जो अपने पुत्रों का भावताव करते हैं। बल्कि हम मध्यम वर्ग के लिए है जो बहुत सो उचित परम्पराओं से गुजरते हैं, छलछिद्र से वंचित है। किसी के धन को धूल और मिट्टी के समान देखते हैं। रिश्तेदारों के साथ ऐसा तुच्छ व्यवहार नहीं करना चाहते।

बौद्ध काल से लेकर अभी तक ब्राह्मणवाद का तो प्रभाव था ही, इसमें बहुत आडम्बरवाद भी लगा था और बहुत सा कर्मकाण्ड लगा था जो समय काल के मुताबिक नहीं था पर जिसे मनुष्य लादे चला फिरता था। जिसका सबसे बड़ा बोझ मध्यम-वर्ग पर ही था। इन्हीं कारणों से हम, जो मध्यमवर्गीय हैं, इसमें रुचि रखेंगे, मुझे आशा है।

आपने जिस मांगलिक कार्य में सहयोग किया है, इसके लिए पवित्र विचार, पावन संकल्प चाहिये। यह महान यज्ञ है। किसी भी यज्ञ से यह हजार गुना ज्यादा पुण्य देने वाला होगा।

इसी के साथ मैं वर-वधू को आशीर्वाद देता हूँ और कामना करता हूँ कि वे इस देश के अच्छे नागरिक बनें तथा उनकी संतानें भी इस देश के अच्छे से अच्छे, जाने-माने व्यक्ति हों।

स्पन्दनरहित अनुभव

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

मुड़िया साधुओं!

मेरी समझ में आज प्राय: सभी जीवों, विशेषत: मनुष्य-प्राणियों के स्वधर्म-विरत दिखने का कारण यह है कि वे मोह, राग और दु:ख की अग्नि में सुषुप्त जलते रहते हैं। जिनको जितनी आसक्ति है, जितना लगाव है, चाहे वह सोना, चाँदी हो, घर, मकान, महल हो, पद, प्रतिष्ठा हो, सम्मान, आदर हो, उससे दुगुनी दु:खाग्नि उन्हें जला रही है।

साधु-मुड़िया मित्रों! उनमें से जिस किसी के साथ दुर्निवार आसक्ति है, लगाव है, वह वियोग को जन्म देता है। वह मुंडत-सज्जन साधु के चित्त को दु:शील, दुर्गुणागार बनाता है। उन्हें दो-पाया सो चौपाया बना देता हैं इन अनिष्टों से रक्षार्थ यह सोचना होगा कि मन के वन में चित्त को सहज करने के उपाय क्या है।

वियोग का दु:ख किसी सुख में आकण्ठ डूब जाने पर भी नहीं जाता है, किसी सम्पदा की प्राप्ति के बाद भी नहीं जाता है। किसी राष्ट्र पर विजय प्राप्त कर लेने पर भी नहीं जाता है। इस भय की भयावह भयंकरता को तिरोहित करना हमारे लिए उचित जान पड़ता है। इसका उपाय है- 'स्पन्दनरहित अनुभव की उपलब्धि।'

मुड़िया साधुओं! 'चित्त निरोध' शब्द का मात्र उच्चारण करना ही नहीं, बल्कि आचरण व्यवहार से इसे अपनाना ही महात्मा मत को स्वीकार करने सरीखा होगा। वही व्यक्ति के और समष्टि (जगत) के भी कल्याण के दर्शन सरीखा होगा। उनकी संतुष्टि-पुष्टि सरीखा होगा। आभ्यन्तरिक और बाह्य दोनों चक्षुओं द्वारा ये दृष्टिगत होंगे। मुड़िया साधुओं! तब हम और आप समाधि की ओर चल पड़ते हैं। सम समतल भूमि प्राप्त होगी। शान्ति समाधि का आविर्भाव होगा, आगमन होगा। भवबंधन कटेगा। आप दम्भरहित, कपटरहित, छलरहित, तिरोहितचित्त होकर अष्टांगिक योग को योगवने में संलग्न हो जायँ। मुड़िया साधुओं! हम आप देखेंगे कि जितने पुरातन एवं नूतन विचार है, वे सभी बिना परिश्रम के तिरोहित हो जायेंगे। इसके निमित्त श्रम शक्ति की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। मातृ, पितृ, गुरु, अहिंसा-हिंसा, स्वर्ग-नरक, शास्त्र सम्बन्धी सभी विडम्बनाओं से मुक्त होकर तुम अपने को अभ्यन्तर से शून्य, स्पन्दनरहित पाओगे। क्लेशरहित पाओंगे। कारणरहित और अकारणरहित पाओगे। परिणहनरहित और परिणारहित पाओगे। तुम जानते हुए अनजान सरीखे, समझते हुए असमझ सरीखे बनो। तुम जन्म धारण करने के उस पूर्ण लक्ष्य को प्राप्त करोगे, जिसे तुमने सुना रखा है, प्राचीनकाल के महापुरुषों ने सार्थक किया था। अष्टांग योग की सिद्धि संयोग नहीं है। यह व्यवहार और विचार का पर्यायवाची है। मेरे कहने का तात्पर्य उस पागलपन से नहीं है, जो प्राणायाम या ध्यान के नाम से या हाथ-पैर उल्टा-सीधा करकपट को जन्म देता है। कुछ भी होना या बनना राग की जननी है। राग किसी भी पुरुषार्थ, पद या विषय के प्रति व्यामोह उत्पन्न करता है। इसकी निर्मूलन संभावित सत्य है। ***शेष अगले अंक में***

अघोर सूत्र

☞ **जो दूसरे का पाप सुनता है वह पाप के १/६ हिस्से का भागीदार हो जाता है और जो सुनाता है वह ५/६ हिस्सा पाप के भागी होता है।**

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी